"मोहन राकेश के नाटकों में स्त्री चेतना"

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
लखनऊ के हिन्दी विभाग में
मास्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि
हेतु प्रस्तुत लघु शोध–प्रबन्ध
की

सारांशिका

BABASAHEB BHIMRAO AMBEDKAR UNIVERSITY
LUCKNOW
प्रज्ञा शील करूणा
ESTABLISHED 1990

शोध–निर्देशिका

डॉ0 प्रीति राय
सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग

शोधार्थी

पिंकी
पंजीयन क्रमांक : 1173/18
हिन्दी विभाग

हिन्दी विभाग
भाषा एवं साहित्य विद्यापीठ
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
विद्या विहार, रायबरेली रोड, लखनऊ–226025

2020–2021

अनुक्रमणिका

भूमिका

प्रथम अध्याय–मोहन राकेश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1. व्यक्तित्व
2. कृतित्व

द्वितीय अध्याय– स्त्री चेतना का तात्पर्य

1. स्त्री चेतना का तात्पर्य

तृतीय अध्याय– मोहन राकेश के नाटकों में स्त्री चेतना के विविध आयाम

1. विवाह संस्था और पुरुष के प्रति पारम्परिक दृष्टिकोण
2. पारिवारिक संरचना एवं आधुनिक दृष्टिकोण
3. नारी का विद्रोह
4. धर्म एवं परम्परा
5. मातृत्व के प्रति नवीन दृष्टिकोण

चतुर्थ अध्याय– शिल्पगत वैशिष्ट्य

1. कथावस्तु
2. पात्र–योजना
3. नाट्य संवाद
4. भाषा–शैली
5. वेश–भूषा एवं साज–सज्जा
6. रंगमंचीयता की दृष्टि से नाटक

उपसंहार

संदर्भ ग्रन्थ–सूची

सारांशिका

प्रथम अध्याय–मोहन राकेश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

मोहन राकेश आधुनिक हिंदी नाट्य साहित्य के एक प्रतिष्ठित नाटककार हैं। इन्होंने नाट्यपूर्व परम्परा को तोड़ते हुए एक नवीन मानदण्ड स्थापित किया है। मोहन राकेश का जन्म एक मध्यवर्गीय परिवार में 08 जनवरी 1925 को पंजाब राज्य के अमृतसर जिले में हुआ था। राकेश जी के पिता एक प्रतिष्ठित वकील एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति थे। इनका बचपन व पारिवारिक वातावरण संतुलित नहीं था। आर्थिक समस्या हमेशा बनी रहती थी। किशोरावस्था में ही इनके पिता जी की मृत्यु हो जाती है जिसकारण पारिवारिक जिम्मेदारी का भार वहन करना पड़ता है। अनेक कठिनाइयों को सहने के बाद भी इन्होंने अध्ययन कार्य जारी रखा। नाटक के अतिरिक्त इन्होने अन्य गद्य विधाओं में भी लेखनी चलाई है। राकेश जी के पूर्व नाट्य रंगमंच को लेकर कोई विशेष कार्य नहीं हुआ था, इसीलिए रंगमंचीय दृष्टि को ध्यान में रखते हुए इन्होंने– 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' और 'आधे–अधूरे' की रचना की। इन तीनों नाटकों में पुरुषों की अपेक्षा स्त्री अधिक सशक्त है। 'आषाढ़ का एक दिन' की मल्लिका, अम्बिका, 'लहरों के राजहंस' की सुंदरी और 'आधे–अधूरे' की सावित्री स्त्री इतिहास के मानदण्डों को तोड़ती नजर आती हैं। प्रस्तुत तीनों स्त्री पात्रों में चेतनशीलता बखूबी नजर आ रही है।

द्वितीय अध्याय– स्त्री चेतना का तात्पर्य

स्त्री शब्द नारी का ही पर्याय माना जाता है, जिसमें लज्जा, सेवा, श्रद्धा, समर्पण, स्नेह, ममतामयी गुण और दयालुता स्वाभाविक रूप से होते हैं। चेतना शब्द से तात्पर्य 'जागृति' से है। वह कोई भी जीवंत वस्तु जो चैतन्य बुद्धि, ज्ञान, स्मृति आदि मनोवृत्तियों से संपृक्त होती है, चेतना कहलाती है। चेतना आंतरिक व

वाह्य दो रूपों में विद्यमान रहती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उचित–अनुचित का ज्ञान ही चेतना है या चेतना स्वयं को और अपने आस–पास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।

स्त्री चेतना से तात्पर्य उन स्थितियों से है जहाँ पर वह शिक्षित, सुसांस्कृतिक देश, घर–परिवार, समाज में अपने कर्तव्यों के प्रति सजग हो जायें और अपने अस्तित्व का बोध कर सकें। आधुनिक समाज में पथ–भ्रष्ट न होकर सामंजस्य बैठाते हुए भारतीय परम्परा एवं संस्कृति का अनुकरण करते हुए अपने पारिवारिक जीवन को सुखमय और वृद्धि के स्तर पर ला सकें। अपने बच्चों का उचित पालन–पोषण एवं योग्य शिक्षा प्रदान कर सकें। आर्थिक सुविधा में पति की सहगामिनी बनकर स्वस्थ समाज एवं परिवार का निर्माण कर सकें, इत्यादि आयामों को देखते हुए स्त्री का चेतनशील होना अति आवश्यक है। स्वतंत्रता पश्चात् स्त्री शिक्षा पर जोर दिया गया परन्तु अभी ग्रामीण स्त्रियाँ अर्द्ध शिक्षित अवस्था में हैं, जो अपने अधिकारों के प्रति जूझ रही हैं। इस संदर्भ में रम्भागौरी गाँधी का कथन है– ''अब भी कुछ बहने अर्द्ध जागृत और अर्द्ध निद्रितावस्था में हैं। वे अपने ऊपर होन वाले अत्याचारों को समझती हैं, अपनी हीन अवस्था का कारण जानती हैं तथा उन्हें अपने स्वमान का आभास मिला है परन्तु वे अपनी उन्नति का उपाय नहीं सोच सकतीं। उन्हें समाज के बंधन, व्यावहारिक अड़चने, संकुचित मनोवृत्ति, रूढ़ि मजबूत जंजीरें और भीरुता आगे आने से रोकती है। वे जागती हैं और फिर सो जाती हैं। वे सो भी नहीं सकती और जागृत भी नहीं हो सकती। इन बहनों के मन में भावनाओं का मंथन हो रहा है। एक दिन वे भी झूठे बंधनों व थोथी प्रणालियों को तोड़कर बाहर आयेंगी और अपने सच्चे स्त्री सम्मानित मार्ग को ग्रहण करेंगी।''

तृतीय अध्याय– मोहन राकेश के नाटकों में स्त्री चेतना के विविध आयाम

स्त्री अपनी अस्मिता की तलाश में तत्पर है, वह अपने स्वयं के अधिकार से लेकर समाज, देश, धर्म, परम्परा व संस्कृति इत्यादि सभी भागों में अपना सक्रिय योगदान देना चाहती हैं। स्त्रियाँ अब जागृत हो रही हैं तथा सन् 1947 के पश्चात् स्त्रियों की सहभागिता कई क्षेत्रों में बढ़ी है। जैसे– साहित्य, कला, विज्ञान, चिकित्सा आदि। मोहन राकेश ने इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखकर ही स्त्री पात्रों की योजना बनाई है। भारतीय समाज में सामाजिक सम्बंधों को व्यवस्थित करने के लिए 'विवाह' नामक संस्था का पालन किया जाता हैं। विश्व में जिस समाज में जैसी सामाजिक और पारम्परिक धारणायें होती हैं, उन्हीं धारणाओं के अनुरुप विवाह का स्वरुप भी विकसित होता है। राकेश जी ने अपने नाटकों में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से वैवाहिक सम्बंधो को स्थापित किया है। एक तरफ जहाँ मल्लिका कालिदास के साथ विवाह करने के लिए अन्य पुरुषों का विरोध करती थी तो वहीं विलोम के साथ विवाह हो जाने के बाद उसी कालिदास को अस्वीकार कर देती है। अम्बिका भी स्त्री धर्म का पालन करते हुए अपने वैधव्य जीवन को स्वीकार करती है। सुंदरी और सावित्री आधुनिकता को धारण करते हुये भी धर्म एवं परम्परा का पालन करती हैं। प्रस्तुत नाटकों में स्त्री अपनी अस्मिता के लिए विद्रोह करती है। मल्लिका अपने जीवन को अपनी सम्पत्ति समझती है और कहती है– ''क्या अधिकार है उन्हें कुछ भी कहने का? मल्लिका का जीवन उसकी अपनी सम्पत्ति है। वह उसे नष्ट करना चाहती है तो किसी को उस पर आलोचना करने का क्या अधिकार है।'' मल्लिका अपने उन्मुक्त प्रेम को लेकर उन सभी अपवादों का विरोध करती है जो उसके प्रेम सम्बन्धों पर लगाये गये हैं। वह स्वछंद जीवन व्यतीत करती है और उन सभी मान्यताओं का खण्डन करती है जो स्त्री को बाध्य बनाते हैं। अम्बिका एक ऐसी पात्र है जो समाज में स्त्री है परन्तु किसी के अधिकार में रहना पसंद नहीं करती

है। अपने व्यवहार एवं अस्तित्व की परख बहुत सूक्ष्म रखती है। लहरों के राजहंस की सुंदरी आधुनिक स्त्री पात्र है। उसकी इच्छा ही सर्वोपरि है, किसी के रहने या न रहने पर उसको कोई फर्क नहीं पड़ता है। उसको अपने सौन्दर्य पर बहुत अभिमान रहता है। उसको लगता है कि यही रूपपाश ही वह माध्यम है जिससे पुरुष बँधा रह सकता है। यही कारण है कि वह यशोधरा के जीवन को असफल मानती है। वह राजवंश की वधू होने के बावजूद अपने पति नंद को अपने इशारों पर नचाती है। आधे–अधूरे की सावित्री आत्मनिर्भर है, वह अपने परिवार का भरण–पोषण स्वयं करती है।

चतुर्थ अध्याय– शिल्पगत वैशिष्ट्य

मोहन राकेश के नाटकों की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि वह शिल्पगत वैशिष्ट्य की दृष्टि में उचित ठहरते हैं। प्रस्तुत सभी नाटकों की कथावस्तु मध्यम है, वह ऐतिहासिक होते हुए भी आधुनिक प्रतीत होते है। आषाढ़ का एक दिन की भाषा संस्कृतनिष्ठ तत्सम प्रधान हो गयी है, जो उसकी ऐतिहासिकता को देखते हुए उचित ठहरती है। अन्य दोनों नाटकों की भाषा सहज एवं सरल है। समाज को देखते हुए ही पात्रों की योजना बनाई गयी है एवं उनके संवादों को गढ़ा गया है। नाटक की सबसे बड़ी समस्या रंगमंच को लेकर होती है। इस सन्दर्भ में राकेश जी कहते हैं– '' एक तो अपने यहाँ विशेष रूप से हिंदी में उस तरह का संगठित रंगमंच है ही नहीं जिसमें नाटककार के एक निश्चित अवयव की कल्पना की जा सके। रंगमंच का जो स्वरूप हमारे सामने है उसकी पूरी कल्पना परिचालक और उसकी अपेक्षाओं पर निर्भर करती है।'' परंतु इस दृष्टि से भी सभी नाटक सफल हैं। इसप्रकार राकेश जी के नाटक स्त्री के विविध आयामों को तो प्रकट करते ही हैं साथ में अपनी शिल्पगत विशेषताओं को भी, जो कि बेजोड़ है।